पारितंत्र

परितंत्रः-

एक स्वसंचलित नियमित प्रकृति का अंश है जहाँ जीव अन्योयन क्रियाओ , पदार्थों का आदान-प्रदान करता है अपने और भौतिक वातावरण के मध्य करते हैं।

परितंत्र छोटा- बडा, अस्थाई – स्थाई, पुर्ण-अपूर्ण, कृत्रिम प्राकृतिक मानव निर्मित स्थलीय या जलीय हो सकता हैं।

परितंत्र के प्रकार

(i) प्राकृतिक और कृत्रिम परितंत्रः-

- प्राकृतिक परितंत्र जो प्राकृतिक परिस्थितियों के अधीन होता हैं। मानव आश्रित नहीं होता हैं।
- जैसे :- वन मरूस्थल, घास स्थल, झील, नदी, समुद्र आदि ।

कृत्रिम परितंत्र वह है जो मानव द्वारा निर्मित होता है ।

जैसे :- बांध, तालाब, जलजीवशाला, एवं शस्य भुमि इत्यादि।

(ii) स्थलीय एवं जलीय परितंत्रः- भूमि पर पाया जाने वाला परितंत्र जो घास स्थल आदि के रूप में होता हैं। जबकि जलीय परितंत्र लवणीय, अलवणीय जल के रूप में होता हैं। जैसेः- नदियाँ, दलदली क्षेत्र, तालाब इत्यादि ।

BoardStudy

(iii) अस्थाई और स्थाई परितंत्र:- ऐसा परितंत्र जो किसी विशिष्ठ मौसम में कुछ समय के लिए ही पाया जाता है। जैसे:- बरसात के दिनों में पानी से भरा गड्ढा।

जबकि स्थाई परितंत्र लम्बे समय तक बने रहते हैं।

(iv) पूर्ण एवं अपूर्ण परितंत्र:-

- ऐसा परितंत्र जिसमें सभी घटक पाये जाते हैं पूर्ण परितंत्र कहलाता है।
- जबकि यदि परितंत्र में कुछ घटको की कमी हो तो उसे अपूर्ण परितंत्र कहते हैं।

पारिस्थितिक तंत्र की संरचना और कार्य

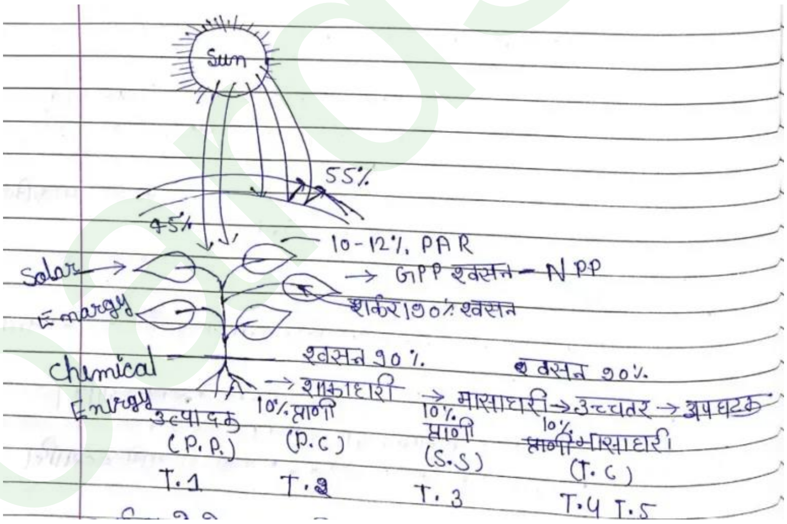

- ऊर्जा ना तो उत्पन्न की जा सकती ना ही नष्ट की जा सकती है।
- पोषण स्तर के प्रत्येक पद में ऊर्जा में कमी आती है।
- ऊर्जा का प्रवाह सदैव एक दिशीय होता है।

पारिस्थितिक तंत्र कई जैविक और अजैविक घटकों के मिलने से बनता है। और ये सभी घटक परस्पर संबंधित और एक - दुसरे के साथ

क्रियान्वित होते है और इनमें ऊर्जा का एक सतत प्रवाह चलता रहता है ।

अजैविक घटक वातावरणीय कारक जो कि किसी स्थान की भौगोलिक पारिस्थितियों का निर्धारण करते है अजैविक घटक कहलाते है।

जैविक घटक पृथ्वी पर ऊर्जा का एक मात्र स्त्रोत सूर्य का प्रकाश होता है। जो फोटॉन के रूप में पृथ्वीपर आता है और इससे प्राप्त होने वाली ऊर्जा ही ऊर्जा प्रवाह के रूप में जीवधारियों में स्थानान्तरित होती है।

उत्पादक प्रोड्युसर (T_1):-

- स्वपोषित घटक होते है ऐसे जीवधारी जो प्रकाशीय सौर ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा में बदल देते है। ट्राँसड्युसर कहलाते है।
- कुछ नील हरित शैवाल और जीवाणु इस प्रक्रिया में ऑक्सीजन मुक्त नहीं करते है इसे ऑक्सी प्रकाश संश्लेषण कहते है।
- गाय भैंस जो दुध का उत्पादन करती है इन्हें द्वितीयक उत्पादक के रूप में जाना जाता है ।

उपभोक्ता/कन्ज्युमरः-

ये वे प्राणी है जो पोषण संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दूसरो पर निर्भर करते हैं इन्हें भक्षीपोषी फैगोट्रॉप्स भी कहते हैं। ये निम्न प्रकार के होते है-

(i) प्रथम श्रेणी उपभोक्ता (शाकाहारी T_2):- ये प्राणी प्रत्यक्षरूप से पौधो पर निर्भर करते है शाकाहारी कहलाते है।

जैसेः-प्रोटोजोआ, टिड्डा , मच्छर, खरगोश, चुहा, गिलहरी, भेड, हिरण

(ii) द्वितीय श्रेणी उपभोक्ता (प्रथम मासाहारी T_3):- वे प्राणी जो शाकाहारी का भक्षण करते है मासाहारी कहलाते हैं।

जैसेः- जलीय किट, हाइड्रा, मेंढ़क, मकड़ी इत्यादि।

(iii) तृतीय श्रेणी उपभोक्ता (द्वितीय मासाहारी T_4):- ये प्राणी मासाहारी प्राणी को खाते है जैसे बड़ी मछली मेडिया, सर्प आदि।

(iv) चतुर्थ श्रेणी उपभोक्ता (उच्चतर मासाहारी T_5):- वे मासाहारी जो किसी अन्य के द्वारा नही खाये जाते हैं।

जैसे :- शेर, बाघ ।

सुक्ष्म उपभोक्ता (अपघटक)

ये मृतजीवी होते है तथा मृत कार्बनिक अकार्बनिक पदार्थो पर पाचक रस छोड़ते हैं पचित पोषक तत्वों को ग्रहण करते है। जैसेः- कवक, जीवाणु।

अन्य विषमपोषीत (अपमार्जक)

मृत भोजी होते है मृत सड़े-गले भोज्य पदार्थो का भक्षण करते हैं।

जैसेः- गिद्ध

परजीवी

ये अपना पोषण किसी सजीव पोषक से बीना पकड़े बीना मारे प्राप्त करते हैं। जैसे:- जीवाणु, कवक, कृमी और कुछ कीट।

उत्पादकता

प्रति इकाई समय में परितंत्र द्वारा उत्पादकता ऊर्जा की वह मात्रा है जो कार्बनिक पदार्थो के रूप में सिमित रहती है। यह ऊर्जा शुष्क पदार्थ, ऊर्जा संग्रहित, प्रति इकाई क्षेत्र, प्रति इकाई समय, प्रति मीटर या प्रतिवर्ष में मापी जाती है। पारिस्थितिकी की वह शाखा जो विभिन्न कारकों एवं कार्बनिक पदार्थों और साथ साथ परितंत्र के विभिन्न घटकों द्वारा उत्पादन के अध्ययन से संबंधित है उत्पादन पारिस्थितिकी कहलाती है।

यह दो प्रकार की होती है –

प्राथमिक उत्पादकता और द्वितीयक उत्पादकता

(I) प्राथमिक उत्पादकता:- यह वह दर जिस पर सूर्य के प्रकाश की ऊर्जा प्राप्त की जाती है और जैव संबंधी संश्लेषण उत्पादक द्वारा प्रति इकाई समय मे प्रति इकाई क्षेत्र पर प्रकाश संश्लेषण द्वारा किया जाता है। ये दो स्वरूप होते हैं।

- **सकल प्राथमिक उत्पादकता (GPP):-** प्रति इकाई समय और प्रति इकाई क्षेत्र में कार्बनिक पदार्थ का कुल उत्पादन जो सौर ऊर्जा द्वारा प्राप्त किया जाता है।
- **नेट प्राथमिक उत्पादकता (N.P.P) :-** यह प्रति इकाई समय प्रति इकाई क्षेत्र में संग्रहित ऊर्जा की मात्रा है जो उत्पादकों द्वारा बनाई

जाती है ओर यही ऊर्जा शाकाहारीयों और खाद्य श्रृंखला में भोजन के रूप में काम में ली जाती है।

यह उत्पादकता अलग अलग क्षेत्रों के लिए अलग अलग होती है क्योंकि यह विभिन्न वातावरणीय घटकों द्वारा प्रभावित होती है। संपूर्ण जैव प्रक्रम की वार्षिक कुल उत्पादकता का भार शुष्क कार्बनिक तत्व के रूप में 170 मिलियन टन आका गया है। जबकि पृथ्वी पर लगभग 70% भाग समुद्र है फिर भी इसकी उत्पादकता 55 मिलियन टन है

(2) द्वितीयक उत्पादकता :-

यह वह दर है जिस पर उपभोक्ताओं द्वारा कार्बनिक पदार्थ बनाया जाता है।

उपभोक्ता जो कि परपोषी है पौधो पर निर्भर करते हैं। यह ग्रहण किए गए भाग को पचा कर पचित पोषक तत्वों का अवशोषण करते है शेष अवशिष्ट पदार्थों के रूप मे निष्कासित कर देते हैं।

इन पचित पोषकतत्वों मे से एक भाग श्वसन में खर्च होता है शेष मांसाहारी कार्बनिक पदार्थ वृद्धि एवं विकास में काम आता है | मांसाहारी कार्बनिक पदार्थ का काफी अंश शिकार के दौरान नष्ट कर देते है और ग्रहण किए गए कार्बनिक पदार्थ का लगभग 60% श्वसन में लेते हैं जबकि 30% अन्य कार्यों प्रयुक्त होता है।

इस प्रकार द्वितियक उत्पादकता में प्राथमिक उत्पादक द्वारा बनाए गए भोजन का उपभोग मात्र उपभोक्ता की जैव संहति बनाने के लिए किया जाता है।

अपघटक

जटिल कार्बनिक पदार्थों का भौतिक एवं रासायनिक विघटन किए जाने क्रिया है और यह अपघटक द्वारा सम्पन्न की जाती है जिसके द्वारा अकार्बनिक कच्चे माल CO_2, H_2O ओर खनिज का उत्पादन किया जाता है। यह प्रक्रिया मुख्यतः मृदा के उपरी स्तर (स्थलीय आवास) या जलाशय की तली में कि जाती है। (जलीय आवास)

अपरद्ध

ये निक्षेपित कार्बनिक पदार्थ अपरद्ध, करकट लीटर कहलाते हैं।

ये दो प्रकार के होते हैं –

(i) भुमि के उपरी स्तर पर पाये जाने वाले अपरदद्‌ः- पादप की सूखी पतियाँ, छाल, पुष्प, उत्सर्जित पदार्थ, अवशिष्ट आदि।

(ii) भूमिगत अपरद्धः- ये जडीय अपरद्ध कहलाते हैं क्योंकि ये मृत जड़ो द्वारा बनते है जैसे- भूमिगत जीव और इनके अवशिष्ट पदार्थ का एक साथ।

अपघटन निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है यह प्रक्रिया धीमी या बन्द हो जाने पर अर्द्ध अपघटित कार्बनिक पदार्थ अत्यधिक मात्रा मे मृदा में इकट्ठे हो जाते हैं।

अपघटन क्रिया विधिः-

तीन प्रकार की क्रियाएँ यहाँ सम्पन्न होती है।

1. अपरद्ध का खण्डनः-

छोटे अकशेरुकी जंतु जिन्हें अपरद्ध कारी कहते है जैसे-केंचुआ, दिमक, चिट्टी आदि । ये अपरद्ध को छोटे छोटे टुकडो में विघटित कर देते हैं और जिस भाग को खाते हैं चूर्णित अवस्था में मल के रूप में बाहर निकाल देते है।

2. निकशालनः-

विलय अंश (शर्करा, अकार्बनिक पोषक तत्व) खण्डित और अपघटित अपरद्ध मे से निक्षालित होकर वर्षा के जल के साथ रिसकर निचे मृदा में पहुँच जाते है।

3. अपचयनः-

मृतोप जीवी जीवाणु कवक द्वारा किया जाता है। ये पाचक रस इनके ऊपर डालते है जिससे कार्बनिक पदार्थ सरल यौगिको में बदल जाते है और अकार्बनिक पदार्थ मुक्त हो जाते है। यह विभेदित अपघटन की प्रक्रिया ह्यूमस के हायूमिभवन और खनिजो के खनिजी भवन द्वारा होती है।

ह्यूमिभवन

अपरद के ह्यूमस मे बदलने की क्रिया है। गहरे रंग का रवेदार आंशिक अपघटित कार्बनिक पदार्थ होता है जिसमे सेल्युलोज, लिग्निन टेनिन रेजिन आदि पाए जाते है। अत्यधिक प्रतिरोधक क्षमता के कारण ह्यूमस कुछ अम्लीय और कोलोइडी पदार्थ होता है।

boardstudy.in boardstudy.in

पोषक के भण्डार के रूप में कार्य करता है। धीमी गति से उगने वाला अपरद है। पौधो को पोषक तत्व उपलब्धता कराता है।

खनिजी भवन

कार्बनिक पदार्थों से अकार्बनिक पदार्थ जैसे CO_2 जल और खनिज लवण मुक्त होने की क्रिया है।

यह सरल, विलेयशील कार्बनिक पदार्थों के साथ बनाए जाते है। जब मृतोपजीवी सुक्ष्मजीव पाचक रस कार्बनिक पदार्थों पर डालते है तो विलेयशील कार्बनिक पदार्थ स्वयं के काम में ले लेते हैं और अकार्बनिक पदार्थ Ca आयन, Mg आयन, K आयन, अमोनियम आयन, Zn आयन,Mn आयन पर दिए जाते है।

अपघटन की प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कारक:-

(1) अपरद की प्रक्रिया:- यदि अपरद मे लिग्निन, काइटिन, सेल्युलोज उपस्तिथ होता हैं तो इसके अपघटन की दर धिमी और यदि नाइट्रोजनी पदार्थ उपस्तिथ होता है तो अपघटन की दर तीव्र होती है।

(2) मृदा PH:- अम्लीय मृदा में अपघटन दर धीमी होती है। जबकि उदासीन एवं हल्की क्षारीय मृदा मे अपघटन की दर तेज होती हैं।

(3) तापमान:- 25°C से ज्यादा ताप पर अपघटन तेज तथा 10°C से नीचे तापमान पर अपघटन की दर धीमी होती है।

(५) आर्द्रता एवं वातनः- आर्द्रता एवं वातन की कमी होने पर अपघटन की दर धीमी होती है।

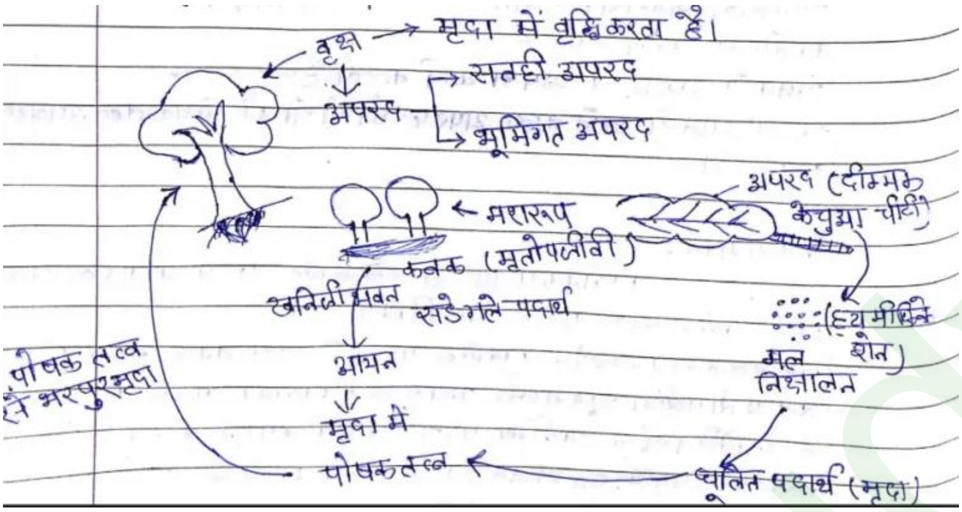

ऊर्जा प्रवाहः- ऊर्जा प्रवाह को समझने से पूर्व उष्मा गतिकी के कुछ सिद्धान्तों को समझना जरूरी है।

- ऊर्जा को न तो नष्ट किया जा सकता और न ही उत्पन्न किया जा सकता है इसे एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है।
- ऊर्जा का प्रवाह एकदिशीय होता है इसका विपरित या उल्टा प्रवाह संभव नहीं है।
- जब ऊर्जा एक पथ से दुसरे पथ मे स्थानांतरित होती है तो इसका कुछ भाग उष्मा या प्रकाश के रूप में विसरित हो जाता है। सौर ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा और उष्मा के रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है।
- 90% भाग उस पद द्वारा काम मे ले लिया जाता है सिर्फ 10% भाग जैव संहति के रूप मे संग्रहित या संचित किया जाता है।
- ऊर्जा का एक भाग शाकाहारी स्तर पर अनुपयोगी रूप मे शेष रह जाता है क्योंकि शाकाहारी भोजन अंतग्रहण भोजन के दौरान

काफी भोजन नष्ट करते हैं और साथ साथ अंतर्ग्रहित भाग मे से अवशिष्ट मल के रूप मे भी निष्कासित कर देते है।

- पादपो की उत्पादकता जो शाकाहारी प्राणियों में पहुंचती है लगभग 10% होती है इस प्रकार लगातार अगले पद मे पहुंचने वाली ऊर्जा की मात्रा पहले स्तर का 10% होती है और इसे दशांश का नियम कहते है इसे लिंडमान द्वारा 1942 में दिया गया।

खाद्य श्रृंखला

प्रकृति मे पोषक स्तरो का अनुक्रम जिसके द्वारा भोजन उत्पादक से अंततः उपभोक्ता तक पहुँचता है खाद्य श्रृंखला कहलाती है।

इस खाद्य श्रृंखला में खाना और खाए जाने की प्रक्रिया चलती है। एक पोषक स्तर पर जो अभी परभक्षक है उच्च श्रेणी के जीव द्वारा शिकार बन जाता है।

खाद्य श्रृंखलाए तीन प्रकार की होती है –

(I) परभक्षी अथवा चारण खाद्य श्रृंखला :- यह एक सामान्य खाद्य श्रृंखला है जो उत्पादक उपभोक्ता और अपघटक से बनी होती है। प्रथम पोषक स्तर पर उत्पादक आते हैं और उपभोक्ता दूसरे से पांचवे स्तर पर पाए जाते हैं और अपघटक अंतिम पोषक स्तर पर उप. होते हैं इसके दो प्रकार होते हैं –

- **(i) जलीय खाद्य श्रृंखला :-** पादप लवक → जन्तु लवक → लघु क्रिस्टेसियन जंतु → छोटी मछली → बड़ी मछली → मगरमच्छ।

- **(ii) स्थलीय खाद्य श्रृंखला:-** स्थल पर पाई जाने वाली खाद्य श्रृंखला जिसकी लंबाई अलग अलग हो सकती है।
  - घास → मवेशी → मनुष्य
  - घास →टिड्डी →मेंढक →सर्प → मोर
  - वनस्पति → खरगोश → लोमड़ी → भेड़िया → बाघ
  - फसल → एफिड्स → लेडिबर्ड बिटल → कीटाहारी पक्षी → बाज

(2) अपरद खाद्य श्रृंखला:- यह खाद्य श्रृंखला मृत कार्बनिक पदार्थों अपशिष्ट आदि से शुरू होती है यह अपरदहारी तथा भक्षक द्वारा निर्मित होती है।

यह तीन प्रकार के होते हैं –

- **(i) अपमार्जक:-** वे प्राणी जो मृत भागो का भक्षण करते हैं,अपमार्जक कहलाते है। जैसे :- कौआ, सिंह
- **(ii) अपरदहारी:-** छोटे आकार के प्राणी जो कार्बनिक अंश का भक्षण करते हैं। जैसे – दीमक, केंचुआ, लारवा आदि।
- **(iii) अपघटक:-** जीवाणु कवक आते है। खनिजी भवन या ह्यूमीभवन क्रिया इनके द्वारा संपन्न होती है।

अपरद→केचुआ → चिडिया→ बाज

(3) परजीवी खाद्य श्रृंखला:- इस श्रृंखला में किसी बड़े जीवधारी के उपर छोटे आकार का जीव निर्भर करता है। अधिकांशत: रोग कारक होते है जो पोषक प्राप्त करते हैं खाद्य श्रृंखला बनाते है लेकिन ये खाद्य श्रृंखला छोटी होती है।

खाद्य जल

दो या दो से अधिक खाद्य श्रृंखलाए इनमें विभिन्न पोषक स्तरो पर अन्तग्रहण इस प्रकार होता है कि एक या अधिक प्रकार की समष्टियों को एक विशिष्ट खाद्य पदार्थ उपलब्ध हो जाता है तथा उपभोक्ता को कई प्रकार के भोजन चुनने का विकल्प होता है।

इस प्रकार जब खाद्य श्रृंखलाएं उलझ जाती है तो खाद्य जाल का निर्माण हो जाता है।

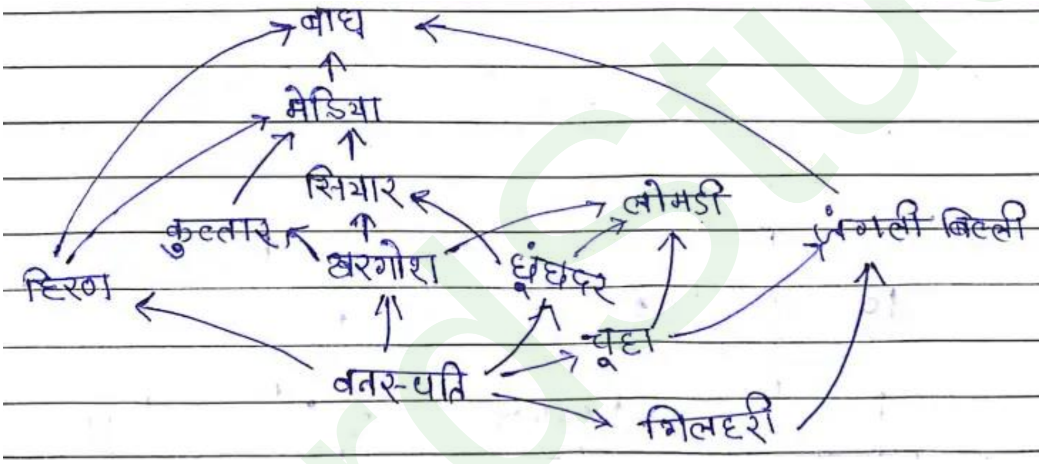

पारिस्थितिकी पीरामीड

- पीरामीड को बार चित्र भी कहा जाता है।
- सर्वप्रथम एल्टन द्वारा 1927 में बनाया गया इसलिए इन्हें एल्टोनियन पिरामीड भी कहते हैं। यह पिरामिड ऊर्जा, भार, संख्या के आधार पर बनाये जाते हैं।
- ऊर्जा के संदर्भ में हमेशा सीधे ही प्राप्त होते हैं।
- जलीय परितंत्र का भार के आधार पर और एक वृक्ष का संख्या के आधार पर पिरामीड उल्टा प्राप्त होता है।

पारिस्थितिक अनुक्रमण

पारिस्थितिक अनुक्रमण में एक समय के बाद एक समान केन्द्र पर जैविक समुदाय की श्रेणियों का निर्माण होता है। जब तक की एक स्थाई जलवायु समुदाय उस क्षेत्र मे विकसित न हो जाये। ऐसा समुदाय जो की उस क्षेत्र की जलवायु के लिए अनुकुलित होता है।

अजैविक, जैविक, भौतिक, रासायनिक और भौगोलिक परिवर्तन इस अनुक्रमण में योगदान देते हैं।

जैविक या पारिस्थितिक अनुक्रमण सामान्यतः बंजर क्षेत्रों में होते हैं जहां सामान्यतः पौधे नहीं होते है और भोजन और आवास न मिलने के कारण जन्तु भी यहां नहीं रह पाते है। ऐसे बंजर क्षेत्रो में सर्वप्रथम पहुंचने वाले पौधे पायोनियर कहलाते है। इन्हें प्राथमिक समुदाय के नाम से भी जाना जाता है।

अनुक्रमण के प्रकार :-

यह दो प्रकार का होता है-

(i) प्राथमिक अनुक्रमण:-

यह प्राथमिक बंजर क्षेत्र पर होता है। जो चट्टानों, पर्वतों या मरुस्थल पर पाया जाता है। यहां पर मृदा की अनु. के कारण पायोनियर समुदाय के लिए आवास अत्यधिक कठिन होता है। और मृदा निर्माण मे ही कई 100 साल से हजारो वर्ष तक का समय लग जाता है। इसलिए यहा प्रथम जीवन अत्यधिक कठिन होता है जिसमे हजारो वर्ष लगते है।

(ii) द्वितीयक अनुक्रमण

यह वह अनुक्रमण है जो आधुनिक नग्न क्षेत्र मे होता है जिसमे अत्यधिक कार्बनिक अवशिष्ट पदार्थ अवशेष और प्राथमिक सजीव जीवधारियों की जातिया हो सकती है। अधिकांशतः यह उन लोगो मे होता है जहां आग, कटाई, चारण, विनाश, मृदा अपरदन , बार बार सुखा पड़ने से या लम्बे समय तक अत्यधिक फसल उगाने से भुमि बंजर हो जाती है।

इस प्रकार यहा पर घास क्षेत्र विकसित करने के लिए 50-100 साल की आवश्यकता होती है और वन निर्माण के लिए 100-200 साल लगते हैं।

अनुक्रमण की क्रिया मे निम्न प्रावस्थाएँ पाई जाती है जिन्हें तीन श्रेणियों में विभक्त करते है –

(i) पायोनियर :-

यह समुदाय जो बंजर क्षेत्र पर सबसे पहले कॉलोनी विकसित करता है कम विभिन्नताओं वाला होता है लेकिन अगले समुदाय के लिए उपयुक्त बंजर क्षेत्र को बदलने के लिए सबसे लम्बा समय लेता है। क्योंकि इसकी वृद्धि विल्कुल प्रतिकुल पारिस्थितियों में होती है।

(ii) ट्रॉजिसनल समुदाय :-

यह वे समुदाय होते है जो पायोनियर एवं जलवायु समुदाय के बीच अनुक्रमण के दौरान विकसित होते हैं। ये धीरे धीरे मृदा का निर्माण करते है।

जैव विविधता विशिष्टकता जैव भुरा रासायनिक चक्र में वृद्धि प्रदर्शित करते हैं।

BoardStudy

प्रारम्भिक जातिया अल्पजीवी लेकिन धीरे धीरे अधिक विकसित और स्थाई प्रजातिया बनती जाती है।

(iii) चरम समुदायः- यह बंद खनिज लवण चक्र उच्चतम विशिष्टकरण जटिल खाद्य जाल के साथ स्थाई स्वतंत्र जनन करने वाला जैव समुदाय होता है जलवायु के साथ पूर्णतः अनुकुलित और जाति विभिन्नता भी अधिकतम पाई जाती है।

जल अनुक्रमण

एक नई बनी हुई झील तालाब जैसे जलीय वातावरण में ये क्रिया होती है यहा पारिस्थितिया धीरे धीरे स्थल की तरह बनती है।

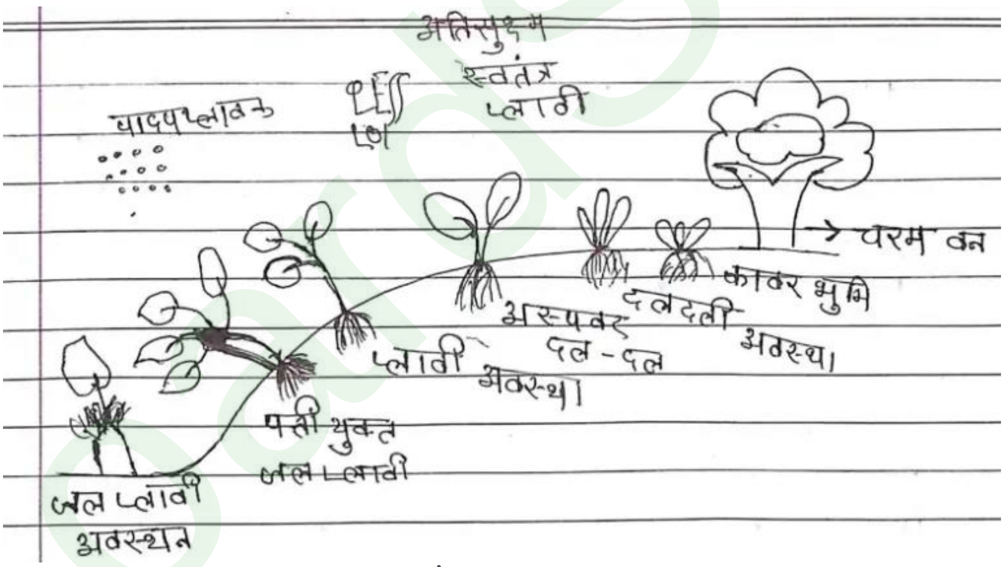

इसमे निम्न अवस्थाएँ पाई जाती है।

(i) पादप प्लावक अवस्था :- प्राथमिक समुदाय है जो नये बने जलीय तंत्र पर विकसित होता है। इस अवस्था के बीजाणु वायु या जन्तुओं द्वारा लाये जाते है।

(ii) अतिसूक्ष्म स्वतंत्र प्लावीः-

प्रकाश संश्लेषी होते है सामान्यतः एक कोशिकीय सायुटिक चपटे हरे शैवाल होते है। उच्च प्रजनन क्षमता लेकिन छोटे जीवन काल वाले होते है।

अत्यधिक कार्बनिक पदार्थ उत्पन्न करते है और उपजाऊ शक्ति बठाने के लिए तली में बैठ जाते है वन पर जन्तु प्लावक निर्भर करते हैं।

जैसेः- साइनोवैक्टीरिया, नील हरित शैवाल, डाइटमस, डाइनों-फ्लोजिलेट, युग्लीनॉइड ।

जल प्लावी अवस्था

यह वहाँ विकसित होती है जहाँ जल साफ और 3-6 मीटर गहरा होता है यह अत्यधिक ह्यूमस बनाते है रेत एकत्र करते है और धीरे-धीरे तली बनाते है।

जैसे- हॉइड्रिला, वेलिशनेरिया, कारा।

प्लावी पत्तीयुक्त अवस्था

- यह वहा विकसित होती है जहा गहराई 1-3 मीटर होती है।
- पौधे तली पर उपस्थित कीचड में धँसे रहते है।

पत्तिया लचीले तने की सहायता से सतह तक पहुँच जाती है। उपरी सतह गिली नहीं होती है। रेत को लाकर तालाब का तल बढ़ाती है।

जैसे- निफ्याि , कयल

प्लावी अवस्था

अधिक खनिज लवण युक्त एवं कार्बनिक पदार्थो से भरपुर मृदा इन पौधो की तेज वृद्धि के लिए अनुकुलित होती है और ये पौधे कई सदस्यो को मारते हुए वृद्धि करते हैं।

जैसे: लेमना, एँजोला ।

अस्पष्ट दलदल

छिछले किनारे पर होता है जल की गहराई 3-1 मीटर होती है। उभयचर प्रकृति के होते है क्योंकि उपरी भाग वायवीय और नीचला भाग जलीय प्रकृति प्रदर्शित करता है रेत को बांधते है। अत्यधिक कार्बनिक पदार्थ उत्पन्न करते हैं। जल की बहुत मात्रा वाष्पोत्सर्जन में निकालते है तल को बढाते है। जैसे – हाइफा, सेजिटेरिया

दलदल अवस्था:- नये बने किनारों पर विकसित होती हैं। बारिश में बाढ़ग्रस्त हो जाते हैं।

अत्यधिक जल वाष्पोसित करते हैं।

जैसे :- पॉलिगोनम्

काष्ठ भुमि अवस्था

इसमें शाक छोटे पेड़-पौधे पाये जाते हैं। जो तीव्र सूर्यप्रकाश और जल रोकने वाली स्थिति को सहन कर न सकते हैं। जल स्तरकम करते है। अत्यधिक भुमि घिर जाती हैं।

जैसे- पॉपुल्स, सलकस।

चरमवन

धीरे-धीरे काष्ठभुमि वन द्वारा प्रतिस्थापित हो जाती है और जलवायु के अनुसार वनो का निर्माण हो जाता है।

स्थलीय अनुक्रमण / मरू अनुक्रमण:-

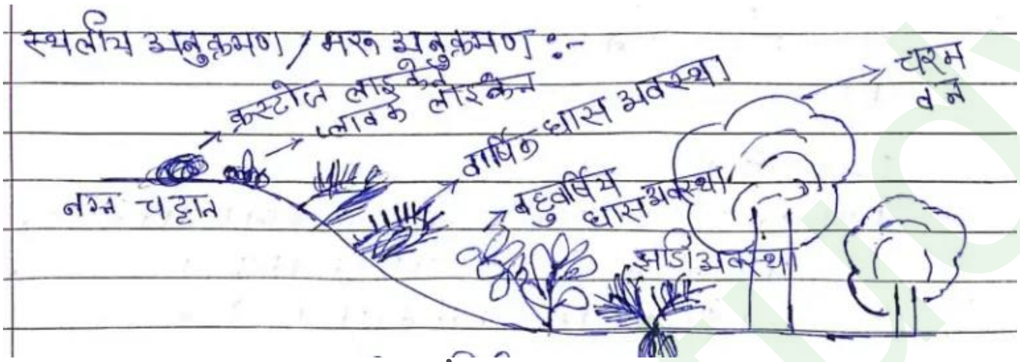

इसमें निम्न अवस्थाएँ पाई जाती हैं-

(i) क्रस्टोजलाइकेन अवस्था (पर्पटी सैल अवस्था) :-

- एक नग्न चट्टान जो पानी नही रोक पाती है। क्योंकि इसमें मृदा नहीं होती है। खनिज लवण उपलब्धता कम होती है। ग्रीष्म ऋतु में ताप बहुत अधिक हो जाता है और शीत ऋतु में बहुत कम हो जाता है। ऐसे क्षेत्र में प्राथमिक सदस्य कस्टोज लाइकेन होते हैं।
- वर्षा या ओस के कारण लाईकेन जातिया चट्टान की सतह पर बैठ जाती है और कई स्थानों पर मुलाभास द्वारा चट्टान से जुड़े जाती हैं।
- यह लाइकेन अम्ल स्त्रावित करते है और चट्टानों में छोटे-छोटे छिद्र बनी है जो इसकी उत्तेजन शीलता का कारण होते हैं। जैसे:- ग्रेफिस

प्लावक लाइकेन अवस्था:-

BoardStudy

कस्टोज लाइकेन द्वारा उर्वरक शक्ति बढ़ने से यह अवस्था बनने लगती है यह भी अम्ल स्त्रावित करते है जिससे चट्टाने ओर ज्यादा उत्तेजित और विघटित हो जाती है।

Ex:- इमेटाकार्बन।

मॉसअवस्था

लाइकेन द्वारा बने गड्ढे मे पर्याप्त कार्बनिक पदार्थ घुल के कण एवं नमी एकत्रित हो जाती है। वायु में उपस्थित मॉस के बीजाणु यहा अंकुरित हो जाते हैं। प्रथम मॉस कठोर होता है जो लम्बे समय तक विघटन सहन कर सकते है इनमे लम्बे मुलाभास पाये जाते हैं।

Ex:- पॉलीट्राइकम

तत्पश्चात सीधी पत्ती वाले उच्च प्रजनन क्षमता वाले मॉस दिखाई देते हैं। मॉस की वृद्धि चट्टान पर सतह का निर्माण करती है अब मृदा लम्बे समय तक जल रोक सकती है। यह पुरे क्षेत्र में फैल जाते है।

वार्षिक घास अवस्था

कई घास और शाक चट्टानों पर पहुंचकर मास द्वारा घिर जाते हैं। इनकी जड़े गहराई में जाकर और चट्टान की सतह टुटने से और अधिक मृदा का निर्माण करती है।

बहुवर्षीय घास अवस्था

अत्यधिक मृदा निर्माण और जल रोकने के साथ बहुवर्षीय शाख ,घास इस क्षेत्र में पहुंच जाती है और ये लम्बी गहरी जडो वाले होते है जिससे और अधिक मृदा का निर्माण हो जाता है जैसे:- सॉलीटेगो।

झाडी अवस्था

कठोर स्थलोदभिद् झाडिया इन क्षेत्रो पर आक्रमण करती है ये झाडिया मृदा परत बनाने में भी सहायता करती है। कम वृद्धि वाली होती है। जैव भूरासायनिक चक्र प्रारम्भ करती है। छाया प्रिय पोंधे इन झाडियों के नीचे उगना शुरू कर देते हैं।

Ex :- जिजिपस, केपेरिस

चरम वन

प्रारम्भ में प्रकाश सहन करने वाली अवस्था स्थापित हो जाने के बाद वृद्धि करना बंद कर देते है जिससे नमी प्रिय छाया सहन करने वाली झाडियां आ जाती है और फिर बड़े आकार के वृक्ष इन स्थानों पर दिखाई देते हैं जिन्हें चरम वन कहते हैं।

पोषण चक्रण

पोषण में वे अकार्बनिक पदार्थ आते है जो आवश्यक तत्वो के उपयोग में लाई जाने वाली अवस्था का प्रतिनिधित्व करते है सजीवो का घटक बनाते है। इसलिए ये जीव-जनीत पोषक तत्व कहलाते हैं और इन्हें पृथ्वी से प्राप्त होने के कारण इन्हें जैव भुरासायनिक तत्व भी कहते हैं।

प्रकृती में विभिन्न पोषक तत्वों का चक्रण लगातार चलता रहता है इसलिए प्रकृति में से ये कभी समाप्त नहीं होते है और अन्नत काल तक प्राप्त होते रहते है।

परितंत्र कार्बन चक्र

- किसी भी जीवधारी के शरीर में शुष्क भार का ४९% कार्बन होता है।
- समुद्र में 7% कार्बन विलय अवस्था में विद्यमान है।
- भुमण्डलीय C का सिर्फ 1% भाग वायुमण्डल में समाहित है।
- जीवाष्मीय ईंधन C के भण्डार का प्रतिनिधित्व करता है।
- C चक्र जैवमण्डल, सागर जीवित तथा मृतजीवियों सम्पन्न होता है।
- जैवमण्डल द्वारा प्रकाश संश्लेषण क्रिया में प्रतिवर्ष लगभग $4X10^3$ कार्बन का स्थिरीकरण होता है।
- इस C की मात्रा CO_2 के रूप में उत्पादक और उपभोक्ताओं से श्वसन द्वारा वायुमण्डल में वापस आती है।

भुमी, समुद्र की कचरा सामग्री, मृत कार्बनिक सामग्री, अपघटन क्रियाओं द्वारा काफी मात्रा अपघटकों द्वारा छोड़ी जाती है। योगिकीकृत कार्बन की कुछ मात्रा अवशाधों में नष्ट हो जाती है।

लकड़ी के जलने, जंगली आग और जीवाष्मीय ईंधन के जलने से कार्बनिक सामग्री ज्वालामुखी आदि क्रियाओं द्वारा वायुमण्डल में CO_2 मुक्त कर दी जाती है।

इस चक्र का मानवीय जीवन पर महत्वपूर्ण प्रभाव होता है। तेजी से जंगलों का होता हुआ विनाश जीवाष्मीय ईंधन के जलने आदि से वायुमण्डल में CO_2 के मुक्त होने की दर बढ़ी है।

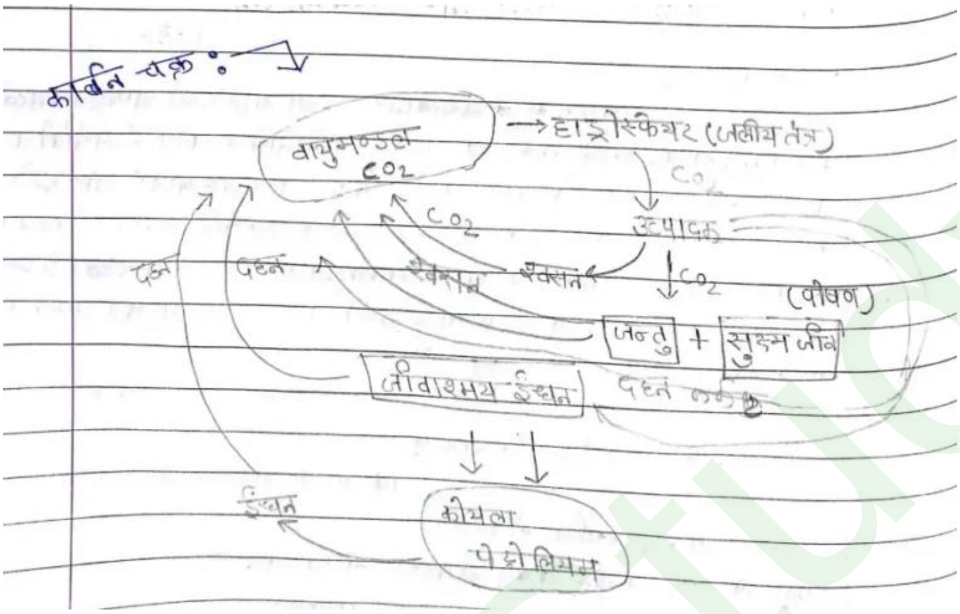

फॉस्फोरस चक्र (अवसाघी चक्र / तलछटी चक्र):- यह एक प्रकार का अवसाघी चक्र है जिसमें गैसीय भार नगण्य होता है।

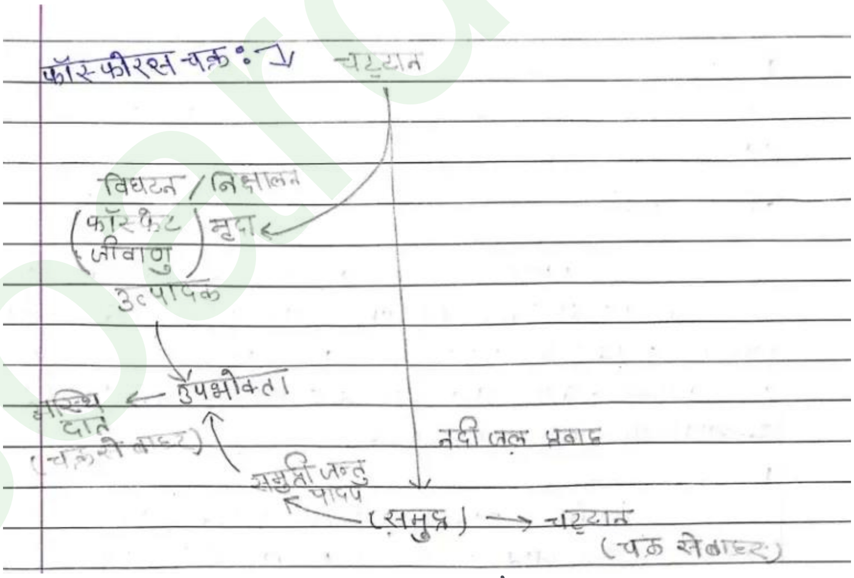

- जीवधारियों के शरीर में विभिन्न जैव रसायन DNA, RNA, ATP, ADP, प्लाज्मा झिल्ली, दाँत, अस्थियों आदि के रूप में उपस्थित होते है। स्थलीय आवास में इसकी उपलब्धता काफी कम होती है। N के बाद दुसरा महत्वपुर्ण तत्व है।

- फॉस्फोरिलीकृत जीवाणु कार्बनिक फास्फेट को अकार्बनिक फास्फेट में परिवर्तित कर देते है। उच्च वर्गीय पादप माइकोराइजा की सहायता से इस फॉस्फोरस को अवशोषित करने में सक्षम होते हैं।
- जलीय परितंत्र सामान्यत: फॉस्फोरस की उच्च मात्रा रखता है जिसका कुछ अंश जीवो द्वारा काम में ले लिया जाता है। शेष जलाशय की तली में एकत्र हो जाता है।
- समुद्र जिसमें बीस मिलियन टन खनिज प्रतिवर्ष डाले जाते हैं जिनमें से कुछ समुद्री जीवो द्वारा काम में लीये जाते हैं। समुद्र से यह फॉस्फोरस निम्न रूपों में प्राप्त कि जाती हैं।
- मछली पकड़ना भोजन या चारे या खाद्य के लिए खनिजी खरपतवारों का एकत्रीकरण, पक्षियों का उत्सर्जी पदार्थ (गुएना) जिसमें फॉस्फोरस की प्रचुर मात्रा पाई जाती है खाद्य के रूप में काम में लेते हैं।
- मृदा में उपस्थित फॉस्फोरस हड्डियों या दाँतों के रूप में अभिसंचित हो जाती है और यह अपघटन द्वारा मुक्त नहीं हो पाती है।

परितंत्र सेवाएँ

पारिस्थितिक तंत्र की सेवाएँ वे लाभ है जो पारिस्थितिय प्रक्रियाओं द्वारा वातावरण की सफाई सौन्दर्य संसाधन बढ़ाना जैव विविधता का नियंत्रण नियमन करना मृदा जल वन्य जीव समुदाय एवं पशुओं के लिए घास के मैदान इत्यादि प्रदान किये जाते हैं। इन सुविधाओं के महत्वपूर्ण घटक निम्न है-

(i) वायु

औद्योगिक क्षेत्र और प्रदुषित गैसे जिन्हें पौधों द्वारा अवशोषित किया जाता है और वायु प्रदुषण मुक्त हो जाती है इसके साथ साथ प्रकाश संश्लेषी क्रियाओं द्वारा ये वायु को शुद्ध करते हैं।

(ii) जल

वनस्पतियाँ वर्षा जल को तेजी से बहने से रोकने के साथ साथ मृदा में रिस्कर जल नीचे पहुंच जाता है जो एक सुरक्षित स्रोत के रूप में काम आता है। ये बाढ़, मृदा अपरदन आदि क्रियाओं को रोकते हैं।

(iii) जैव विविधता :-

एक प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र जिसमें विभिन्न जातिया उनके वास स्थान के साथ साथ जैव विविधता दिखाई देती है जिससे प्राकृतिक आकर्षण और सौन्दर्य बना रहता है जो पर्यटन को प्रेरित करता है।

(iv) पोषक पदार्थ:- इस तंत्र की महत्वपूर्ण सुविधा विभिन्न पोषक तत्वों के रूप में विभेषित रहती है ।

(v) परागण:-

परागण की क्रिया स्वतः ही विभिन्न जीवों द्वारा कर दी जाती है।

वन्यजीवन

यह तंत्र विभिन्न जीवों को वास स्थान प्रदान करता है।

रॉबट कॉन्सटेजा और उनके साथियों द्वारा इस पारिस्थितिक सुविधाओं का मान ट्रीलीयन डॉलन के बीच दीया जाता है। औसत मान 33 ट्रिलियन डॉलन होता है जो विश्व का GNV (ग्रोथ राष्ट्रीय उत्पादन) दुगना कर देता है जो कि 18 ट्रिलियन डॉलन होता है। इस मान का 50% उपज नियमित करने में 10% अपरदन और बाढ़ से बचाने के लिए और लगभग 6% पोषक पदार्थ चक्रण के लिए और जलवायु नियमन एवं वास स्थान के लिए योगदान देता है।